IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

समाज के निर्माण में बाल साहित्य की भूमिका

डॉ. तृप्ति उकास

सहायक प्राध्यापक, हिन्दी

शासकीय महाकोशल कला एवं वाणिज्य

स्वशासी महाविद्यालय, जबलपुर, म. प्र.

शोध सार

किसी भी देश या समाज के भविष्य का अनुमान उसके वर्तमान बचपन को देखकर लगाया जा सकता है। बचपन के निर्माण में जिन तत्वों की प्रमुख भूमिका रहती है वे हैं- पारिवारिक वातावरण, विद्यालय और बच्चों को पढ़ने के लिए मिलने वाला साहित्य । शब्दकोश के अनुसार साहित्य का अर्थ होता है हित करना । 'स हितेन हिताय:' अर्थात जिस लिखित कृति के अध्ययन, चिन्तन और मनन से मानवमात्र की भलाई हो वही सच्चे अर्थों में साहित्य की कोटि में आयेगी। जहाँ तक बाल साहित्य का प्रश्न है तो 'सामान्यतः 4 से 14 वर्ष तक की आयु वाले बालक-बालिकाओं के लिए लिखा जाने वाला साहित्य बाल साहित्य माना जाता है।'"

प्रत्येक देश और समाज का भविष्य उसके बच्चों पर ही निर्भर होता है। वहीं उसके भावी निर्माता होते हैं। अतएव जो समाज या राष्ट्र अपने इन भावी निर्माताओं के प्रति उदासीन रहता है उसका भविष्य अंधकारपूर्ण समझना चाहिये। अतः निश्चित ही समाज के निर्माण में बाल साहित्य की अहम भूमिका है ।

मुख्य शब्द :- प्रस्तावना, विस्तार, बाल साहित्य का रूप, स्वतंत्र लेखन की प्रेरणा, भविष्य को आकार देने में सक्षम, चारित्रिक निर्माण, सामाजिक विकास, निष्कर्ष ।

प्रस्तावना

छोटे बच्चों का संसार अपने आकार-प्रकार, रंग-रूप में बड़ों के संसार से सर्वथा भिन्न होता है। बड़ों के संसार में लोक- शिष्टाचार, सभ्यता, संस्कृति, समाज, राष्ट्र, जाति, आदर्श, नियम-विधान आदि पग-पग पर विद्यमान रहते हैं, जिनसे अलग करके हम व्यक्ति की कल्पना नहीं कर सकते । बच्चों के संसार में इन

सबका अभाव रहता है। बच्चे निजी तौर पर न तो शिष्टता- सभ्यता का अर्थ समझते हैं और न ही नियम-विधानों की कोई चिन्ता उन्हें सताती है। उन्हें अपने खेल-खिलौनों, तस्वीरों की पुस्तकों इत्यादि से जितना मोह होता है उतना किसी अन्य वस्तु या व्यक्ति से नहीं। अपने खेल के साथियों को वह पारिवारिक सदस्यों से भी ज्यादा प्यार करते हैं। उनके संसार में व्यक्ति का सम्बन्ध केवल मनुष्यता के नाते होता है, देश, जाति, धर्म या वर्ण के आधार पर होने वाले सम्बन्धों की वहाँ कोई मान्यता नहीं होती।

ऐसे बालकों की भावनाओं से युक्त साहित्य, समाज के निर्माण में अभूतपूर्व भूमिका का निर्वहन करता है । यह साहित्य समाज को एक नई दिशा प्रदान करता है, नया स्वरूप देता है और नए आयाम खोज कर लाता है । क्योंकि ऐसा साहित्य उन समस्त बालकों के समक्ष प्रस्तुत होता है जो, हमारे राष्ट्र के, हमारे समाज के भावी कर्णधार हैं । कभी यह बाल साहित्य उनके समक्ष छोटी-छोटी कहानियों के रूप में आता है, तो कभी कविताओं के रूप में आता है । कभी हठखेली पहेलियों के रूप में आता है तो कभी नवीनता लिए हुए नाट्य के रूप में भी प्रस्तुत होता है । इस प्रकार यह बाल साहित्य बालकों के हृदय को मोहित करता है और उन्हें समाज में नए रूप में प्रस्तुत होने की क्षमता प्रदान करता है ।

विस्तार

किसी भी समाज का निर्माण बालकों से प्रारंभ होता है उन्हीं पर अवलंबित होता है और उन्हीं के द्वारा विकास को प्राप्त होता है अतः निश्चित ही बाल साहित्य का इस दिशा में अपूर्व योगदान है वास्तविकता यह है कि "'संसार के सारे पदार्थ और कार्य – व्यापार बच्चों को जैसे दिखाई देते हैं वैसे बड़ों को नहीं। पहाड़, नदी या बादल को देखकर जो कौतूहल, जिज्ञासा, हर्ष या भय के भाव बच्चों के मन में उठते हैं वैसे बड़ों के मन में नहीं उठते । बच्चों के लिए बड़े किसी परदेशी से कम अपरिचित नहीं होते । जैसे हम भारतीय किसी रूसी, जर्मन या अंग्रेज के बारे में एक अजनबीपन अनुभव करते हैं, वैसा ही अजनबीपन बच्चे हम बड़ों के बारे में अनुभव करते हैं"[i]।

आधुनिक काल के प्रायः सभी मनोवैज्ञानिकों ने किसी व्यक्ति के स्वभाव का अध्ययन करने में दो बातों का ज्ञान आवश्यक माना है एक तो उस व्यक्ति – के वंशानुक्रम का ज्ञान, दूसरे उस वातावरण या उन परिस्थितियों का ज्ञान जिनमें उसके स्वभाव को विकसित होने का अवसर मिलता है। सभ्य-सुसंस्कृत माता-पिता के बच्चे भी प्रायः सभ्य और सुसंस्कृत होते हैं। पर यह भी देखा जाता है कि ऐसे बच्चे यदि बुरी संगत में पड़ जाते हैं तो उनमें अपने माता- पिता के गुण नहीं आते । लॉक का कथन है कि- 'मनुष्य का मन एक स्वस्थ काले तख्ते के समान है जिस पर बिना लिखे कोई संस्कार अंकित नहीं होता। इसी प्रकार हमारे

स्वस्थ मन पर वातावरण और जीवन अनुभवों के कारण अनेक संस्कार आते हैं । इन समस्त कोमल भावनाओं का लिखित रूप हमें साहित्य के द्वारा प्राप्त होता है साहित्य समाज का दर्पण है जो समाज में व्याप्त विभिन्न घटना चक्र को कलात्मक रूप से समाज के ही समक्ष प्रस्तुत करता है । जिसकी आधार भित्ति साहित्य पर टिकी होती है । अतः एक ऐसे साहित्य में बालकों को स्थान दिया गया है जो समाज के लिए अत्यधिक सदुपयोगी भी होता है ।

बाल-साहित्य का रूप

बाल साहित्य का प्रथम रूप लोरी और प्रभाती के रूप में भिन्न-भिन्न स्थानों और बोलियों में प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है । गीतों के बाद हर काल में बच्चों को सबसे ज्यादा कहानियों ने आकर्षित किया है। यह बाल साहित्य का सबसे लोकिप्रय और शक्तिशाली अंग रहा है। लिखित रूप में अप्राप्य होने पर भी इस विधा के साहित्य का अभाव कभी नहीं रहा। कहानी बहुउद्देशीय तथा बहुगुणीय होने से बालमन की प्रकृति और प्रवृत्तियों को मनोरंजक ढंग से तृप्ति देने में समर्थ होने के कारण बच्चों को सबसे अधिक आकर्षित करने की शक्ति रखती है। पंचतन्त्र के प्रणेता आचार्य विष्णु शर्मा ने कहानियों द्वारा ही भटके हुए राजकुमारों को सुमार्ग पर ला दिया था। उनकी वे मौखिक कहानियाँ आज विश्व की लगभग सभी भाषाओं में अनूदित होकर पुस्तकाकार के रूप में उपलब्ध हैं । इस प्रकार का साहित्य जहां बालकों को विभिन्न प्रकार की नैतिकताओं से, चारित्रिक गुणों से, आदर्शों से जोड़ता है वहीं समाज में भी विभिन्न प्रकार के जीवन मूल्यों को विकसित करता है । विष्णु प्रभाकर के द्वारा लिखा हुआ पंचतंत्र ऐसी ही बाल कहानियों का संग्रह है । जिसकी एक एक कहानी की शिक्षा चरित्र के मोतियों को संजोए रखने वाली है ।

इस प्रकार के बालसाहित्य के विविध रुप देखने को मिलते हैं । समय और परिस्थितियों के साथ बालसाहित्य में विभिन्न प्रकार के परिवर्तन और परिवर्धन देखने को मिलते हैं । मनुष्य की अभियच्यि परिष्कृत हुई तो रचनाओं में भी निखार आने लगा । कहानी के विषयों के साथ शैलियों के रूप भी बदले। पौराणिक कथाओं, इतिहास, राजाओं की वीरता, महापुरुषों के उदात्त परित्रों के साथ परियों और भूत-प्रेतों की काल्पनिक कहानियों का भी निर्माण होने लगा। चुटकुले, पहेलियाँ आदि भी सृजित होने लगी। नाटक की रचना बीसवी शती के प्रारम्भ तक बच्चों के लिए नहीं हुई। हाँ, बड़ों के नाटकों में हास्य तथा वीरता के अभिनय को बच्चे, विशेष रूप से किशोर भी समझते थे और खूब रुचि भी लेते थे । प्राचीन संस्कृत बाल साहित्य को विद्वानों ने लोक बोलियों में रूपान्तिरत करके राजमहल से झोपड़ी तक पहुंचा दिया। रूपान्तरण में देशकाल के अनुरूप परिवर्तन भी किये गये किन्तु कथा की मूल आत्मा को सुरक्षित रखा गया। लोकबोलियों में आने पर लोक कथा साहित्य के रूप में बालकों को समृद्ध साहित्य भी प्राप्त हुआ। संस्कृत

और लोकबोलियों की भारतीय कथाओं ने विदेशी साहित्य को भी समृद्ध किया है। आधुनिक काल के पूर्व तक बच्चों ने इसी कथा साहित्य को सुना या आंशिक रूप से पढ़ा और स्वयं को आल्हादित किया।

"सन् 1608 में ईस्ट इंडिया कम्पनी का भारत आना इतिहास की एक बड़ी घटना थी। कम्पनी ने बाल शिक्षा संस्थाओं की स्थापना की और बाल पाठ्यपुस्तकों का भी निर्माण कराया। सन् 1858 में ईस्ट इंडिया कंपनी के समाप्त हो जाने के बाद भी अंग्रेजी हुकूमत ने कम्पनी के कार्यकाल में बनी योजनाओं को आगे ही बढ़ाया। इसी क्रम में बाल पाठ्यपुस्तक समितियों का गठन हुआ। इन समितियों की संस्तुति पर बच्चों की जो पुस्तकें तैयार हुई, उनमें पहली बार व्यवस्थित रूप से बाल साहित्य भी रचा गया"[ii]।

स्वतन्त्र लेखन की प्रेरणा

उन्नीसवी शताब्दी के अन्त तक रचे गए बाल साहित्य के प्रमाण उपलब्ध नहीं हैं, परन्तु बीसवी शताब्दी के प्रारम्भिक दौर की पाठ्यपुस्तकें देखने से बाल साहित्य की प्रगतियात्रा का अनुमान लगाया जा सकता है । इन्हीं पाठ्यपुस्तकों ने स्वतन्त्र बाल साहित्य लेखन की प्रेरणा भी दी। समाज में बाल साहित्यकारों की वृद्धि हुई है जिन्हें साहित्य के क्षेत्र में उपलब्धि प्राप्त हुई है और उनका स्वयं के जीवन में व्यक्तित्व निखरा है । इसके बाद का समय बाल साहित्य के उत्तरोत्तर विकसित और प्रतिष्ठित होने का समय है। आज बाल साहित्य भी उतनी ही गंभीरता से सृजित किया जा रहा है जितनी गंभीरता से बड़ों का साहित्य ।

चारित्रिक निर्माण

बाल साहित्य अपने आप में विशिष्ट स्वरूप को धारण करने वाला है । इसमें समाज के स्वरूप एवं व्यक्तित्व के बीज निहित हैं । बाल साहित्यकार संस्कार और दिशा प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है । यह बालकों की प्रारंभिक अवस्था, उनके मन, विचार और कल्पना को परिमार्जित करते हुए समाज और राष्ट्र के भावी स्वरूप की पृष्ठभूमि को तैयार करने में अग्रणी रहता है । हिंदी का बाल साहित्य सदैव ही युग सापेक्ष रहा है । उसका विकास भी अत्यंत तीव्र गति से हुआ है । आज विविध विधाओं के रूप में बाल साहित्य लिखा जा रहा है । बाल साहित्य का सृजन बालकों के चारित्रिक निर्माण की बुनियाद रख रहा है । बाल साहित्य में निहित कहानियां बालकों को विभिन्न प्रकार के नैतिक आदर्शों को देने वाली हैं । उनमें जीवन मूल्यों की शिक्षाएं सन्निहित हैं । उस साहित्य में चरित्र की उद्भावनाएं हैं और इस रूप में यह बाल साहित्य समाज के समक्ष चारित्रिक गुणों को उदाहरण सहित प्रस्तुत कर समाज के निर्माण में सहयोगी सिद्ध होता है ।

भविष्य को आकार देने में सक्षम

बाल साहित्य बालकों के भविष्य निर्माण में भी अपनी अहम भूमिका का निर्वाह करता है। बाल साहित्य में निहित कहानियाँ, मुहावरे, लोकोक्तियाँ, लोरियाँ, मुकरी अधिक रोचक तथा प्रेरणाफरक और नीतिगत शैली को धारण करने वाली होती हैं । जिनके पठन-पाठन से बच्चों को भी अनेक प्रकार के नवीन आयाम प्राप्त होते हैं । और वह अपने भविष्य को नया आकार देने में सक्षम हो पाते हैं । इस प्रकार बाल साहित्य बालकों के भविष्य को आकार देने में अहम भूमिका का निर्वाह करता है । बच्चों के लिए लिखी जाने वाली रोचक कहानियाँ अनेक प्रकार की शैक्षिक युक्तियों से सन्निहित होती हैं। जिन्हें पढ़कर बालक प्रेरित होते हैं अपने जीवन में कुछ अच्छा करने के लिए और कुछ अच्छा व्यक्तित्व धारण करने के लिए । अतः बाल साहित्य को और अधिक प्रचार-प्रसार व विकास की आवश्यकता है । जिससे बालकों का ध्यान इधर-उधर न भटक सके और वह एक सही दिशा की ओर उन्मुख हो सकें ।

सामाजिक विकास

"समाज में हो रहे विकास और वैज्ञानिक प्रगति के साथ बच्चों का सतत् समन्वय बनाये रखने और उन्हें पर्याप्त मात्रा में मानसिक खुराक देते रहने के लिए नित नये और स्तरीय बाल साहित्य के सृजन की आवश्यकता तो सदैव बनी ही रहेगी"[iii] ।बाल साहित्य का सृजन तब तक प्रभावी नहीं हो सकता जब तक बाल साहित्यकार के सामने यह स्पष्ट न हो वह किस समाज के बालकों के लिए लिख रहा है, यानी उसे बालकों किस प्रकार का नागरिक बनाने के लिए साहित्य रचना है। बाल साहित्य का सृजन उच्चतम साहित्य साधना पर ही निर्भर है और उसकी प्रेरणा के लिए यह भी अत्यन्त आवश्यक है कि बाल साहित्यकारों को भी वही स्थान प्राप्त हो जो अन्य साहित्यकारों को प्राप्त हैं। इस प्रकार बाल साहित्यकार बालकों के उच्च भविष्य निर्माण की भावना को हृदय में रखते हुए उच्च गुणों से युक्त एक प्रभावी साहित्य को जब समाज के सामने प्रस्तुत करता है तो समाज में यह साहित्य श्रेष्ठ नागरिकों का निर्माण करता है जो समाज के विकास में सहयोगी से सिद्ध होता है । अतः आवश्यकता है कि बाल साहित्यकारों को भी उच्च स्थान की प्राप्ति होनी चाहिए ताकि वह बढ़-चढ़कर इस प्रकार के साहित्य का निर्माण करें और इस रूप में अप्रत्यक्ष रूप से समाज का निर्माण करने में सहयोगी हों ।

निष्कर्ष

बाल साहित्य का निर्माण प्रारंभिक काल से ही होता चला आ रहा है डॉ. चक्रधर नलिन के अनुसार "वैदिक काल में कन्याओं के लिए भी उत्तम बाल साहित्य का सृजन हुआ जिससे वेद-ऋषिकायें घोषा, लोपामुद्रा, उर्वशी, कामंदकी, अपाला आदि की भूमिका का स्वरूप उद्घाटित हुआ । लोकजगत् तथा परिपुष्ट जगत के साहित्य को विद्वानों ने अलिखित तथा लिखित रूप में मान्यता प्रदान की है। भोजपत्रों पर लिखित बालोपयोगी सूत्र, जीवनी आदि रचनाएँ बच्चों का पर्याप्त ज्ञानार्जन करती रहीं। बच्चों के लिए तात्कालिक विद्वत् मण्डल ने पौराणिक, धार्मिक, सांस्कृतिक कथाओं, व्यास शैली में वर्णित नीतिपरक ब्रह्मा सम्बन्धी इतिहास, नक्षत्र विद्या, ज्योतिष व्याकरण, तर्क, सर्प तथा विष सम्बन्धी ज्ञान व्यवस्था की। ऋग्वेद (एतरेय), यजुर्वेद (शतपथ), सामवेद (पंचविंश), अथर्ववेद (गोपथ) के अतिरिक्त आरण्यक तथा ब्राह्मण ग्रंथ रचनाओं से गुरुजन उच्च चरित्र सम्बन्धी ज्ञान बच्चों को आसानी से देते था"[iv]।

इस प्रकार हम देखते हैं कि कथाओं और प्रवचनों के माध्यम से प्राचीनकाल में बाल साहित्य अभिवर्द्धित हुआ। ब्राह्मणग्रंथों में बच्चों में इन्द्रिय निग्रह के साथ ही शुद्ध तथा पवित्र आचरण तथा चरित्र के बीज भी रोपित किये गये। इस काल में बच्चों में दृढ संकल्प, अतुल और महनीय मानसिक और बौद्धिक ज्ञान संपदा के बीजांकुरण के साथ ही पर्याप्त मनोरंजन के तत्त्वों को संयोजन किया गया। यही कारण है कि विश्व बाल साहित्य में संस्कृत का साहित्य आज भी श्रेष्ठता स्तर की दृष्टि से अविस्मरणीय, सार्थक, कालजयी तथा जीवन्त हैं और यह बाल साहित्य समाज के निर्माण में प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से निरंतर अपना सहयोग प्रदान कर रहा है ।

सन्दर्भ सूची

हिन्दी बाल साहित्य एक विश्लेषण : डॉ. रामप्रसाद मिश्र

बालगीत साहित्य : निरंकार देव सेवक

हिंदी बाल साहित्य क्रमिक विकास : डॉ श्री प्रसाद,

हिंदी बाल साहित्य दशा एवं दिशा : विष्णुकांत पाण्डेय,

हिंदी बाल साहित्य का विधागत विकासक्रम : डॉ० चक्रधर नलिन

बाल साहित्य और भक्ति काल : अपर्णा खरे

बाल साहित्य के विविध आयाम : संपादक विनोद चंद्र दुबे

---

[i] बालगीत साहित्य : निरंकार देव सेवक (प्रस्तावना भाग)

[ii] हिंदी बाल साहित्य क्रमिक विकास - डॉ श्री प्रसाद, पृष्ठ – 68

[iii] हिंदी बाल साहित्य दशा एवं दिशा विष्णुकांत पाण्डेय, पृष्ठ – 09

[iv] हिंदी बाल साहित्य का विधागत विकासक्रम - डॉक्टर चक्रधर नलिन, पृष्ठ – 25